पसम-भावो

(प्रशम भाव)

मंगल आशीर्वाद :

परम पूज्य सिद्धान्त चक्रवर्ती
राष्ट्र संत आचार्य श्री विद्यानंद जी मुनिराज

ग्रंथकार :

आचार्य वसुनंदी मुनि

ग्रंथ : पसम-भावो (प्रशम भाव)

मंगल आशीर्वाद : परम पूज्य सिद्धान्त चक्रवर्ती राष्ट्रसंत आचार्य श्री 108 विद्यानन्द जी मुनिराज

ग्रंथकार : आचार्य श्री वसुनंदी मुनिराज

संपादन : आर्यिका वर्धस्वनंदनी

संस्करण : प्रथम, वर्ष 2023 ई.

प्रतियाँ : 1000

मूल्य : सदुपयोग

ISBN : 978-93-94199-57-6

प्रकाशक : निर्ग्रन्थ ग्रन्थमाला समिति रजि.

प्राप्ति स्थान : निर्ग्रन्थ ग्रन्थमाला समिति
ई. 16 सैक्टर 51, नोएडा-201301
मो. 9971548889, 9867557668, 8800091252

मुद्रक : मित्तल इंडस्ट्रीज़, नई दिल्ली
मो.: 9312401976
Visit us @ www.acharyavasunandi.com

संपादकीय

वपुरारोग्यमैश्वर्यं धनर्द्धिः कामनीयकम्।
बलमायुर्यशो मेधा वाक्सौभाग्यं विदग्धता॥
इति यावान् जगत्यस्मिन् पुरुषार्थः सुखोचितः।
स सर्वोभ्युदयः पुण्यपरिपाकादिहांगिनाम्॥
न विनाभ्युदयः पुण्यादस्ति कश्चन पुष्कलः।
तस्माभ्युदयं प्रेप्सु पुण्यं संचिनुयाद् बुधः॥

– आदिपुराण, 15/219-221

सुंदर शरीर, नीरोगता, ऐश्वर्य, धन-संपत्ति, सुंदरता, बल, आयु, यश, बुद्धि, सर्वप्रिय वचन और चतुरता आदि इस संसार में जितना कुछ सुख का कारण पुरुषार्थ है वह सब अभ्युदय कहलाता है और वह सब संसारी जीवों को पुण्य के उदय से प्राप्त होता है। पुण्य के बिना किसी भी बड़े अभ्युदय की प्राप्ति नहीं होती, इसलिए जो विद्वान् पुरुष अभ्युदय प्राप्त करना चाहते हैं, उन्हें पहले पुण्य का संचय करना चाहिए।

जीव के विशुद्ध, निर्मल परिणाम पुण्यार्जन में प्रधान कारण हैं। परिणामों की संक्लेशता वा कलुषता के साथ की गई पुण्य क्रियाएँ भी तदनुरूप फल देने में समर्थ नहीं होतीं। जब तक आत्मा में कषायों का उपशम न हो तब तक शांत, सुखद परिणामों की उत्पत्ति वैसे ही संभव नहीं है जैसे जल में गंदगी के नीचे बैठे बिना निर्मल जल की संप्राप्ति संभव नहीं है। कषायों के उपशम वा प्रशम भाव की उपलब्धि श्रेष्ठ बुद्धिमान् मनुष्य का प्रथम पुरुषार्थ होता

है। जिनपूजा, जाप, दान इत्यादि भी परिणामों को निर्मल बनाने हेतु किया जाता है।

''स्नपनार्चा स्तुतिजपान् साम्यार्थं प्रतिमार्पिते''[1] साम्य भाव की प्राप्ति के लिए अरिहंत प्रतिमा का स्नपन, अर्चन, स्तवन व जपन करें। परिणामों की निर्मलता के साथ ही पुण्य क्रियाओं की सार्थकता है। ग्रंथकार परम पूज्य आचार्य श्री वसुनंदी जी मुनिराज ने ग्रंथ के अंतर्गत कहा है–

सामाइयं वंदणा, थुदी पडिक्कमणं पच्चक्खाणं।
काउस्सग्गो विणओ, वेज्जावच्चं सज्झाओ य॥67॥

झाणं पायच्छित्तं, अणसणं जिणपूया सुगुरुसेवा।
सुकज्ज-सफलीभूदं पसमभावसंजुदजीवस्स॥68॥

सामायिक, वंदना, स्तुति, प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान, कायोत्सर्ग, विनय, वैय्यावृत्ति, स्वाध्याय, ध्यान, प्रायश्चित्त, उपवास, जिनपूजा और गुरुसेवा आदि प्रशम भाव युक्त जीव के ही सफलीभूत होते हैं।

प्रस्तुत ग्रंथ **''पसम-भावो''** (प्रशम भाव) परम पूज्य अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी आचार्य श्री 108 वसुनंदी जी मुनिराज द्वारा रचित विशुद्धिवर्द्धक ग्रंथ है। इस ग्रंथ में आचार्य भगवन् ने कषायों के शमन के माहात्म्य व कषायोत्पत्ति से उत्पन्न हानि का विवेचन किया है। प्रशम भाव व्यक्ति की वह महत्वपूर्ण निधि है जिसके बिना वह शाश्वत संपदा को प्राप्त नहीं कर सकता। ग्रंथ के पठन से सम्यक्त्व के लक्षण प्रशम भाव को हृदयंगम करना सरल प्रतीत होता है। हमें

1. वृहत्सामायिक

विश्वास है कि इसका स्वध्याय कर आप सभी महानुभाव अपने परिणामों को विशुद्ध कर कषायों का शमन करने में समर्थ हो सकेंगे।

परम पूज्य आचार्य गुरुवर श्री वसुनंदी जी मुनिराज की लेखनी से प्रवाहित ज्ञान धारा में आज भव्यजन अवगाहन कर आत्म कलुषता को दूर कर रहे हैं एवं यह ज्ञानधारा अग्रिम युगों-युगों तक प्रवाहित होती हुई जिनशासन को जीवंत रखती हुई भव्यों के कल्याण में निमित्त बनेगी। जिनश्रुत संवर्द्धक आचार्य गुरुवर के चरणों में कृतज्ञ भाव से सदियाँ, यह मानवता सदैव नतमस्तक रहेगी, उनके प्रति सदैव ऋणी रहेगी। उनके द्वारा प्रदत्त यह साहित्य मात्र जिनशासन की नहीं अपितु देश, राष्ट्र व विश्व की अमूल्य धरोहर है।

प्रस्तुत ग्रंथ **''पसमभावो''** अर्थात् प्रशम भाव के संपादन में कोई त्रुटि रह गई हो तो विज्ञजन संशोधित कर पढ़ें, नीर-क्षीर विवेकी हंसवत् गुणग्राही दृष्टि से ग्रंथाध्ययन कर निज परिणामों को निर्मल करने का परम पुरुषार्थ करें। जन-जन के हृदयांबुज पर विराजमान परम पूज्य राष्ट्र हितैषी संत, अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी आचार्य गुरुवर श्री वसुनंदी जी मुनिराज के संयम, तप, ज्ञान, ध्यान व साधना का सौरभ युगों-युगों तक विश्व को सुरभित करता रहे। परम पूज्य आचार्य गुरुवर श्री के चरणों में सिद्ध-श्रुत-आचार्य भक्ति सहित कोटिशः नमोस्तु! नमोस्तु! नमोस्तु!

''जैनम् जयतु शासनम्''

-आर्यिका वर्धस्वनंदनी

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय	गाथा सं.	पृष्ठ सं.
1.	मंगलाचरण	1-2	10
2.	वीतरागता ही सारभूत	3	10
3.	वीतरागता का जनक-वैराग्य	4	10
4.	वैराग्य की जननी	5	11
5.	वैराग्य लक्षण	6	11
6.	वैराग्य क्यों?	7	11
7.	संसार के भेद	8	12
8.	भव हेतु-देह	9-10	12-13
9.	कर्म क्षय का निमित्त	11	13
10.	देह विरक्ति से मोक्षमार्ग	12	13
11.	देह नश्वरता	13	14
12.	बहिरात्मा	14	14
13.	संसार वृद्धिकारक-भोग	15	14
14.	प्रशम भाव प्रशंसा	16	15
15.	सम्यग्दृष्टि के लक्षण	17	15
16.	कषायोदय में प्रशम भाव असंभव	18	15
17.	प्रशम भाव से लाभ	19	15

क्र.सं.	विषय	गाथा सं.	पृष्ठ सं.
18.	संवेगी कौन?	20	16
19.	अनुकंपा	21	16
20.	आस्तिक्य	22	16
21.	प्रशम भाव से आत्मसिद्धि	23	17
22.	सम्यग्दर्शन की निर्मलता	24	17
23.	तत्त्वज्ञान	25	17
24.	तत्त्वज्ञानी ही मुक्ति के पात्र	26	17
25.	सम्यग्दर्शन व उसके भेद	27	18
26.	सराग सम्यक्त्व	28	18
27.	वीतराग सम्यक्त्व	29	18
28.	सराग सम्यग्दर्शन के लक्षण व गुण	30	19
29.	गुणस्थानापेक्षा वीतराग सम्यक्त्व	31	19
30.	गुणस्थानापेक्षा सराग सम्यक्त्व	32	19
31.	सम्यग्दर्शन के अतिचार	33	20
32.	वीतराग सम्यक्त्व किसके?	34	20
33.	आत्म हित का बीज	35	20
34.	कषाय शमन से ही प्रशम भाव	36	21
35.	स्वपरघातक-क्रोध	37	21
36.	सर्व-गुणभक्षी अग्नि-क्रोध	38-39	21

क्र.सं. विषय	गाथा सं.	पृष्ठ सं.
37. क्षमा से क्रोध पर विजय	40	22
38. मानी के कठोर भाव	41	22
39. गुणग्राहक नहीं मानी	42	22
40. मान से हानि	43	23
41. विनय से उत्थान	44-45	23
42. सुभाव घातक छल	46	24
43. रोग की जननी-दु:चिंता	47	24
44. निजात्मवंचक-कपटी	48	24
45. मायाचारी का स्वरूप	49	25
46. सरल व्यक्ति का सामर्थ्य	50	25
47. दीर्घ व निकट संसारी	51	25
48. भावी परमात्मा कौन?	52	26
49. लोभ पाप का बाप	53	26
50. लोभी की दुर्गति	54	26
51. जटिल बंधन-लोभ	55-56	27
52. लोभ क्षय हेतु निर्देश	57	27
53. पाप का जनक-पाप	58-60	28
54. आत्मघातक-कषाय	61	28
55. बिंब-प्रतिबिंबवत् कषाय-नोकषाय	62	29

क्र.सं.	विषय	गाथा सं.	पृष्ठ सं.
56.	सुख का कारण-प्रशमभाव	63	29
57.	गुणोत्पादक प्रशमभाव	64	29
58.	प्रशमभाव द्वारा राष्ट्र व आत्महित	65-66	30
59.	प्रशमभाव से सुकार्यों की सफलता	67-68	30
60.	प्रशमभाव का फल	69	31
61.	ग्रंथकार की लघुता	70	31
62.	अंतिम मंगलाचरण	71	31
63.	प्रशस्ति	72	32

आचार्य वसुनंदी मुनिराज कृत

पसम-भावो

(प्रशम भाव)

मंगलाचरण

वंदिय अणंतसिद्धे, गदराय-देवे सव्वसाहुणो य।
वोच्छामि पसमभावं, सय सवरकल्लाणत्थं हं।।1।।

अनंत सिद्धों, वीतरागी देव व सभी साधुओं को सदा वंदन करके स्व-पर कल्याण के लिए मैं (आचार्य वसुनंदी मुनि) 'प्रशमभाव' नामक ग्रंथ को कहता हूँ।

जिणधम्मं जिणवयणं, सव्वचेइय-चेइयालयाइं च।
णमित्ता विसुद्धीए, पसमभावजुदप्पम्मि ठामि।।2।।

जिनधर्म, जिनवाणी, सर्व चैत्य व चैत्यालयों को विशुद्धिपूर्वक नमस्कार करके मैं प्रशम भाव से युक्त अपनी आत्मा में स्थित होता हूँ।

वीतरागता ही सारभूत

भुवणत्तयम्मि सारं, वीयरायत्तं सगप्पणुभूदी।
केवलणाणकारणं, सव्व-कम्मक्खयहेदू तह।।3।।

तीनों लोकों में सारभूत वीतरागता स्वात्मानुभूति है, वही केवलज्ञान का कारण है तथा सर्व कर्मक्षय का हेतु है।

वीतरागता का जनक-वैराग्य

तस्स जणग-वेरग्गं, हेदू संजमो सुतवो झाणं वि।
अप्पहिदं सिवमग्गो, ण संभवो विणा वेरग्गं।।4।।

उस वीतरागता का जनक वैराग्य है। संयम, सम्यक् तप व ध्यान भी वीतरागता का कारण है। वैराग्य के बिना आत्मा का हित व मोक्षमार्ग संभव नहीं है।

वैराग्य की जननी

भासिदा अणिच्चादी, बारसविहा अणुवेक्खा समयम्मि।
ता हु वेरग्ग-मादू, संवेगस्स बहिणी णेया।।5।।

अनित्य आदि बारह प्रकार की अनुप्रेक्षाएँ जिनागम में कही गई हैं। वे बारह भावनाएँ वैराग्य की माता और संवेग की बहनें जाननी चाहिए।

वैराग्य लक्षण

भव-सरीर-भोयादो, विरत्तभावो णेयं वेरग्गं।
तं सम्मं वेरग्गं, संजमुप्पायगं णियमेण।।6।।

संसार-शरीर-भोगों से विरक्ति का भाव वैराग्य जानना चाहिए। वह सम्यक् वैराग्य नियम से संयम को उत्पन्न करता है।

वैराग्य क्यों?

कम्मबंधेण जीवो, भमदि दव्वाइ-पणविहसंसारे।
तं परिभमणं खयिदुं, भव्वो गहेज्जा वेरग्गं॥7॥

कर्मबंध से जीव द्रव्यादि पाँच प्रकार के संसार में परिभ्रमण करता है। उस संसार परिभ्रमण के क्षय के लिए भव्य जीव वैराग्य धारण करता है।

संसार के भेद

दव्वखेत्तयालभाव-भवा पणविहो संसारो भणिदो।
एक्को विरत्तभावो, समत्थो तं उहट्टेदुं च॥8॥

द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव व भाव ये पाँच प्रकार का संसार कहा गया है। उस संसार के क्षय के लिए एक विरक्त भाव ही समर्थ है।

भव हेतु-देह

पंचविह-सरीराइं, संसारे भमण-कारणं णियमा।
चउविह-कायजोगा दु, कम्मासव-दुआराइं चिय॥9॥

पाँच प्रकार के (औदारिक, वैक्रियक, आहारक, तैजस व कार्माण) शरीर नियम से संसार में परिभ्रमण का कारण हैं। तैजस काय के बिना चार प्रकार की काय के योग कर्मास्रव के द्वार हैं।

कम्मासव-कारणं दु, चउविहा मण-वयण-जोगा णियमा।
देहणिमित्तेण ते वि, देहेण विणा णेव बंधो ॥10॥

चार प्रकार के मन योग व चार प्रकार के वचन योग नियम से कर्मास्रव का कारण हैं। वे योग भी देह के निमित्त से होते हैं। देह के बिना कर्मों का बंध नहीं होता।

कर्मक्षय का निमित्त

थूलो उराल-देहो, जदि वज्ज-उसह-णाराय-जुत्तो दु।
कम्मभूमिजस्स होज्ज, मुक्ख-हेदू कम्मक्खयस्स॥11॥

कर्मभूमि में उत्पन्न हुए मनुष्य का स्थूल औदारिक शरीर यदि वज्रवृषभनाराच संहनन से युक्त होता है तो वह कर्मक्षय का प्रबल निमित्त होता है।

देहविरक्ति से मोक्षमार्ग

णियड-भवी देहं पडि, विरत्तभावेण होज्ज संजुत्तो।
देह-विरत्तीइ विणा, को खमो ठादुं सिवमग्गे॥12॥

निकट-भव्य जीव शरीर के प्रति विरक्त भाव से युक्त होता है। देह से विरक्ति के बिना मोक्षमार्ग पर स्थित रहने में कौन समर्थ होता है? अर्थात् शरीर से विरक्त जीव ही मोक्षमार्ग पर स्थिर हो सकते हैं।

देह नश्वरता

देहो अचेयणो खलु, ण अमुत्तिगो अप्परूवो कयाइ।
आउक्खये देहो वि, खयदि वरं कुणदि राय-महो॥13॥

देह निश्चय से अचेतन है। यह देह कदापि अमूर्तिक व आत्मरूप नहीं हो सकती। आयु के क्षय होने पर शरीर भी नष्ट हो जाता है; किन्तु अहो! जीव तब भी इस नश्वर शरीर में राग करता है।

बहिरात्मा

मण्णदि देहं अप्पा, अण्णाणी खलु बहिरप्पा जो सो।
मिच्छाइट्ठी णियमा, लहंति इह अणंत-दुहाइं॥14॥

जो अज्ञानी शरीर को आत्मा मानता है वह निश्चय से बहिरात्मा है। मिथ्यादृष्टि जीव नियम से इस संसार में अनंत दु:ख प्राप्त करता है।

संसार वृद्धिकारक-भोग

भुंजंति अइगिद्धीइ, विसया पंचिंदियाण अण्णाणी।
भोया भववड्ढगा दु, भोय-विरत्ती सिवहेदू य॥15॥

अज्ञानी जीव ही अति आसक्ति से पंचेन्द्रिय के विषयों को भोगते हैं। भोग संसार की वृद्धि करने वाले हैं और भोगों से विरक्ति मोक्ष का हेतु है।

प्रशम भाव प्रशंसा

विरागो पसम-हेदू, पसमेण विणा णेव सुहं संती।
पसमो अप्पवरगुणो, धम्मपुत्तो समत्तपाणो॥16॥

वैराग्य प्रशम भाव का कारण है और प्रशम भाव के बिना सुख व शांति संभव नहीं है। यह प्रशम भाव आत्मा का श्रेष्ठ गुण, धर्म का पुत्र व समता भाव का प्राण है।

सम्यग्दृष्टि के लक्षण

पसमो तह संवेगो, अत्थिक्कं अणुकंपा णियमादो।
सम्माइट्ठि-जीवाण, होंति सया चउ-लक्खणाइं॥17॥

सम्यग्दृष्टि जीव के नियम से चार लक्षण सदैव होते हैं—प्रशम, संवेग, आस्तिक्य और अनुकंपा।

कषायोदय में प्रशम भाव असंभव

कोहाइ-कसायाणं, समणादो जादो दु पसमभावो।
कसायस्स तिव्वुदये, कहं ठाएज्ज सो चित्तम्मि॥18॥

क्रोधादि कषायों के शमन से प्रशमभाव उत्पन्न होता है। कषाय के तीव्र उदय में वह प्रशम भाव चित्त में किस प्रकार ठहर सकता है? अर्थात् नहीं ठहर सकता।

प्रशम भाव से लाभ

उक्किट्ठ-पसमभावं, जो पाउणेदि जम्मि यालम्मि सो।
सुद्धप्पसरूवस्स दु, समीवे ठादि तम्मि याले॥19॥

जो जीव जिस समय उत्कृष्ट प्रशमभाव को प्राप्त करता है वह उस समय शुद्धात्म स्वरूप के समीप में स्थित होता है।

संवेगी कौन?

धम्मं धम्मफलं तह, धम्मिट्ठा पडि धरदि हरिस-भावं।
णियगुणधम्मं कंखदि, जो सो भासिदो संवेगी॥20॥

जो धर्म, धर्म के फल तथा धर्मात्माओं के प्रति हर्ष भाव धारण करता है, अपने गुण व धर्म की आकांक्षा करता है वह संवेगी कहा गया है।

अनुकंपा

पस्सिदूणं दुहिजणा, करुणाए विरादे जस्स हिअयं।
तस्स अणुकंपा गुणो, धम्मीणं लक्खणो भणिदो॥21॥

दु:खीजनों को देखकर जिसका हृदय करुणा से द्रवित हो जाता है, उसका वह अनुकंपा गुण है। यह अनुकंपा धर्मात्माओं का लक्षण कहा गया है।

आस्तिक्य

अप्पा परमप्प-सत्ति-जुदो इमो विस्सासो अत्थिक्कं।
पत्तेयं अप्पा खलु, णेयो सिद्धोव्व सत्तीए॥22॥

आत्मा परमात्म शक्ति से युक्त है यह विश्वास आस्तिक्य है। प्रत्येक आत्मा निश्चय से सिद्ध के समान जाननी चाहिए।

प्रशम भाव से आत्मसिद्धि

पसमभावेण विणा ण, संभवा वद-सील-दाण-पूया य।
संजमो तवो झाणं, तेहि विणा णो अप्पसिद्धी॥23॥

प्रशम भाव के बिना पूजा, दान, व्रत, शील, संयम, तप व ध्यान संभव नहीं है और इन सबके बिना आत्मसिद्धि संभव नहीं है।

सम्यग्दर्शन की निर्मलता

परमट्ठभूददेवे, सत्थे गुरु-जिणधम्मेसु सद्दहिय।
मूढत्तं मद-दोसा, विहाय कुणदु दंसण-विमलं॥24॥

परमार्थभूत जिनेंद्रदेव, शास्त्र, निर्ग्रन्थ गुरु व जिनधर्म में श्रद्धान करके मूढ़ता, मद व दोषों का त्याग कर सम्यग्दर्शन निर्मल करना चाहिए।

तत्त्वज्ञान

अप्पपरभेदणाणं, तच्चणाणरूवं होज्ज तियाले।
चेयणिदर-दव्वा णो, कयाइ होज्ज चेयणरूवा॥25॥

स्वपर भेद विज्ञान तीन काल में तत्त्वज्ञान रूप होता है। चेतन से इतर द्रव्य कदापि चेतन रूप नहीं होते।

तत्त्वज्ञानी ही मुक्ति के पात्र

मिच्छाइट्ठी णियमा, हवंति विहीणा तच्चणाणादो।
तच्चणाणजुद - सम्माइट्ठी अइरं लहंति मोक्खं॥26॥

मिथ्यादृष्टि नियम से तत्त्वज्ञान से विहीन होते हैं। तत्त्वज्ञान से युक्त सम्यग्दृष्टि जीव शीघ्र मोक्ष को प्राप्त करते हैं।

सम्यग्दर्शन व उसके भेद

सद्दहणं तच्च-दव्व-पंचत्थिकाय-णव-पदत्थाणं च।
चदुविहं दु सम्मत्तं, दव्वखेत्ताइ-अणुसारेण॥27॥

सात तत्त्व, छः द्रव्य, पाँच अस्तिकाय व नव पदार्थों का श्रद्धान करना सम्यग्दर्शन है। द्रव्यादि (द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव) के अनुसार सम्यग्दर्शन चार प्रकार का जानना चाहिए।

सराग सम्यक्त्व

सम्मत्तं बेविहं च, भेयादो सराय-वीयरायाणं।
ववहारागमभासा, भेदं सरागं एगट्ठं॥28॥

सराग और वीतराग के भेद से सम्यक्त्व दो प्रकार का कहा गया है। व्यवहार सम्यग्दर्शन, आगमभाषा, भेद व सराग सम्यग्दर्शन एकार्थवाची हैं।

वीतराग सम्यक्त्व

अप्पविसुद्धिमेत्तं दु, वीयराय-सम्मत्तं णिच्छयं च।
अभेद-मज्झप्पं वा, सुद्धदंसणं च एगट्ठं॥29॥

आत्म विशुद्धि मात्र वीतराग सम्यक्त्व है। निश्चय सम्यग्दर्शन, वीतराग सम्यग्दर्शन, अभेद सम्यग्दर्शन, अध्यात्म सम्यग्दर्शन व शुद्ध सम्यग्दर्शन एकार्थवाची हैं।

सराग सम्यग्दर्शन के लक्षण व गुण

पसमाइ-चउलक्खणा, संवेगाइ-वसुगुणा सरागस्स।
धारित्ता जदणेणं, करेज्ज सगसम्मत्त-ममलं॥30॥

सराग सम्यग्दर्शन के प्रशम आदि चार लक्षण व संवेगादि अष्ट गुणों को धारण कर यत्नपूर्वक अपने सम्यक्त्व को निर्मल करना चाहिए।

गुणस्थानापेक्षा वीतराग सम्यक्त्व

वीयरायसम्मत्तं, अप्पमत्तप्पहुडि अजोगंतं च।
णीचअ-गुणट्ठाणेसु, असंभवो दु खरविसाणं व॥31॥

अप्रमत्त गुणस्थान से अयोगकेवली गुणस्थान तक वीतराग सम्यक्त्व होता है। नीचे के गुणस्थानों में वीतराग सम्यक्त्व गधे के सींग के समान असंभव है।

गुणस्थानापेक्षा सराग सम्यक्त्व

चदुत्थ-गुणट्ठाणादु, पहुडि-पमत्तंतं तहा सरागं।
पढम-विदिय-ठाणेसुं, असंभवो दु तिदिये मिस्सं॥32॥

चौथे गुणस्थान से प्रमत्तविरत गुणस्थान तक सराग सम्यक्त्व होता है। प्रथम व द्वितीय गुणस्थान में सम्यक्त्व असंभव है एवं तृतीय गुणस्थान में मिश्र भाव होता है।

सम्यग्दर्शन के अतिचार

संकाकंखदुगुंछा, अण्णदिट्ठिपसंसा संथवो तह।
सम्माइट्ठीण पणादियारा वारेज्ज जदणेण॥33॥

शंका, कांक्षा, विचिकित्सा, अन्यदृष्टि-प्रशंसा तथा अन्यदृष्टि- संस्तव ये सम्यग्दृष्टि के पाँच अतिचार हैं। इन अतिचारों को यत्नपूर्वक दूर करना चाहिए।

वीतराग सम्यक्त्व किसके?

संजमविहीणाणं दु, णो कयाइ वीयरायसम्मत्तं।
तं सव्वदा संभवो, रयणत्तय-धारगाण-मेव ॥34॥

संयम से रहित जीवों के कदापि वीतराग सम्यक्त्व नहीं हो सकता। वह वीतराग सम्यक्त्व रत्नत्रय धारकों के लिए ही सर्वदा संभव है।

आत्म हित का बीज

कसायसमणत्तादो, अप्पहिद-बीअं पसमभावो खलु।
पसमभावं विणा कं वि सम्मत्तं संभवो णेव॥35॥

कषायों का शमनत्व होने से प्रशमभाव निश्चय से आत्महित का बीज है। प्रशमभाव के बिना कोई भी सम्यक्त्व संभव नहीं है।

कषाय शमन से ही प्रशम भाव

समभावो असंभवो, समणं विणा कोहाइ-कसायाण।
बीअं विणा रुक्खोव्व, खीरं विणा सप्पीव तहा।।36।।

क्रोधादि कषायों के शमन के बिना प्रशमभाव उसी प्रकार असंभव है जिस प्रकार बीज के बिना वृक्ष और दुग्ध के बिना घी असंभव है।

स्वपरघातक-क्रोध

तिव्वकोहोदयादो, जीवो होदि अविवित्तो लोयम्मि।
कोहजुदो पकुव्वेदि, सवरघाद-महिदं सव्वाण।।37।।

तीव्र क्रोध के उदय से जीव अविवेकी होता है। क्रोध से युक्त जीव लोक में अपना व दूसरों का घात करता है एवं सभी का अहित करता है।

सर्व गुणभक्षी अग्नि-क्रोध

कोहेण खयंति खमा, दया विवेगो संती अज्जवया।
जह अग्गिणा डज्झंति, चंदणाइ-बहुमुल्ल-रुक्खा।।38।।

क्रोध से क्षमा, दया, विवेक, शांति व सरलता उसी प्रकार नष्ट हो जाते हैं जिस प्रकार अग्नि से चंदनादि बहुमूल्य वृक्ष जलकर नष्ट हो जाते हैं।

णासेदि वत्तमूलं, अज्झप्पसत्तिं सया कोहग्गी।
कोहेण कलह-असंति-कूरभावा तह मिहो होज्ज।।39।।

क्रोध रूपी अग्नि आरोग्य के मूल व अध्यात्म शक्ति को नष्ट करती है। क्रोध से परस्पर में कलह, अशांति तथा क्रूरभाव होते हैं।

क्षमा से क्रोध पर विजय

खमाणीरं समत्थं, णिव्वाविदुं जीवस्स कोहग्गिं।
कोहुवसमेण जीवे, फुडेदि खंतिभावो णियमा॥40॥

जीव की क्रोधाग्नि को बुझाने के लिए क्षमा नीर ही समर्थ है। क्रोध के उपशम से जीव में नियम से क्षांति भाव प्रकट होता है।

मानी के कठोर भाव

माणतिव्वोदयादो, जीव-भावा अइकक्कसा सिला व्व।
तस्स ण रुच्चदि हिअयर-सिक्खा पित्तजरे सप्पीव॥41॥

मान के तीव्र उदय से जीव के भाव शिला के समान अति कर्कश होते हैं। उस मानी व्यक्ति को हितकर शिक्षा उसी प्रकार नहीं रुचती जिस प्रकार पित्त ज्वर वाले को घी नहीं रुचता।

गुणग्राहक नहीं मानी

माणी णत्थि मण्णंति, हिअयर-सिक्खं जिणसुदसाहूणं।
माणकसायेणं णो, अच्चेदि दु ते सो अंधोव्व॥42॥

मानी व्यक्ति जिनदेव, श्रुत व निर्ग्रन्थ साधुओं की हितकर

शिक्षा नहीं मानते। मान कषाय के कारण जो जीव उन जिन, श्रुत व साधुओं की अर्चना नहीं करता वह अंधे के समान है।

मान से हानि

कुलमज्जादा च धम्मकज्जं जिणायदणाणि सक्कारा।
माणिस्स सया खयंति, णिराउल-अप्पसुहं वि तहा।।43।।

मानी व्यक्ति के कुल की मर्यादा, धर्म के कार्य, जिनायतन, सुसंस्कार तथा निराकुल आत्मसुख भी सदा नष्ट होता है।

विनय से उत्थान

माणकसायसमणेण, विणयजुत्तो जीव-पवत्ती जेण।
सक्को गहिदुं सिक्खं, सुसक्कार-धम्मणीदि-गुणा।।44।।

मान कषाय के शमन से जीव की प्रवृत्ति विनय से युक्त होती है। जिस विनय से जीव शिक्षा, सुसंस्कार, धर्म, नीति व गुणों को ग्रहण करने में समर्थ होता है।

माणसमणेण सक्कदि, खमिदुं तवं रयणत्तयं गहिदुं।
तच्चचिंतणं करिदुं, वच्छलं तह वेज्जावच्चं।।45।।

मान कषाय के शमन से जीव क्षमा करने में, तप व रत्नत्रय को ग्रहण करने में, तत्त्वचिंतन, वात्सल्य तथा वैय्यावृत्ति करने में समर्थ होता है।

सुभाव घातक छल

तिव्वमाया-उदयादु, हवेज्ज चिय वक्क-कुडिल-परिणामा।
जेण खयंति सुभावा, अज्जवियं सुहदं धम्मो य॥46॥

तीव्र माया के उदय से जीव के वक्र व कुटिल परिणाम होते हैं। जिससे जीव के शुभ-निर्मल परिणाम, धर्म व सुखद सरलता नष्ट हो जाती है।

रोग की जननी दु:चिंता

सुद्धप्पाणुभूदिं ण, समत्थो कुणिदुं वक्कपरिणामी।
दुच्चिंता-आबद्धो, सगदेहं कुणदि सय रोयी॥47॥

कुटिल परिणाम वाला जीव शुद्धात्मानुभूति करने में समर्थ नहीं होता है। सदा दु:चिंता से बंधा हुआ जीव अपनी देह को रोगी कर लेता है।

निजात्मवंचक-कपटी

कुडिलस्स ण को वि बंधु-सेवग-परमोवयारी मित्तं च।
कुव्वेदि हु अप्पघादं सो उमच्छेदि णियप्पं च॥48॥

कुटिल जीव का न तो कोई बंधु, न सेवक, न परम उपकारी और न ही कोई मित्र होता है। वह मायाचारी अपनी आत्मा का घात करता है और निजात्मा को ठगता है।

मायाचारी का स्वरूप

जिम्हो णो गंभीरो, धीरो णो वीरो धम्मकज्जम्मि।
दुट्ठकज्जरदो दुट्ठ-मणोभाव-कूडे बद्धो दु।।49।।

मायाचारी गंभीर व धीर नहीं होता, धर्म कार्य में वीर नहीं होता। वह दुष्ट कार्य में रत, दुष्ट मनोभाव रूप पिंजरे में बंधा होता है।

सरल व्यक्ति का सामर्थ्य

माया-समणेणं जो, णिय-परिणामा कुणेदि उज्जू सो।
अज्जवधम्मं लहिदुं, समत्थो अप्पणिच्चविहवं।।50।।

माया कषाय के शमन से जो अपने परिणामों को सरल करता है वह आर्जव धर्म तथा आत्मा के नित्य वैभव को प्राप्त करने में समर्थ होता है।

दीर्घ व निकट संसारी

गेहे रिअंत-सप्पो, उज्जू बहिरम्मि वक्कगदि-जुत्तो।
जह तह कुडिलो हु दिग्घ-संसारी णियडो सरलो य।।51।।

जैसे अपने घर में जाता हुआ सर्प सीधा होता है और बाहर वक्र गति से युक्त होता है अर्थात् टेढ़ा-मेढ़ा चलता है। उसी प्रकार दीर्घ संसारी कुटिल होता है और निकट भव्य सरल होता है।

भावी परमात्मा कौन?

जाणिदुं सगसहावं, सद्दहिदुं फासिदुं खमो सरलो।
सरलो भयवदोव्व तह, णियमादु भावी परमप्पा॥52॥

सरल जीव अपने स्वभाव को जानने, श्रद्धान करने व स्पर्श करने में समर्थ होता है। सरल परिणामी जीव भगवान् के समान होता है और नियम से भावी परमात्मा होता है।

लोभ-पाप का बाप

लोहस्स तिव्वुदयादु, सव्वविहासुहाइं जीवो कुणदि।
णेरिसं कं वि पावं, जं लोहवसेण कुव्वदि णो॥53॥

लोभ के तीव्र उदय से जीव सर्व प्रकार के अशुभ कार्य करता है। ऐसा कोई भी पाप नहीं है जो जीव लोभ के वशीभूत न करता हो।

लोभी की दुर्गति

लोही लोए भमदे, तडप्फडदि कूडे बद्धपक्खीव।
रज्जुणा बद्धपसूव, आकंदेदि तिव्व-लोहेण॥54॥

लोभी (लालची जीव) लोक में परिभ्रमण करता है। वह पिंजरे में बंद पक्षी के समान तड़पता है। तीव्र लोभ से जीव रस्सी से बंधे पशु के समान क्रंदन करता है।

जटिल बंधन-लोभ

णरं पसुं बंधेदुं, सक्कदि जह णिविड-अयस-संकलिआ।

सव्वजडिलबंधणं दु, लोहो अप्पस्स तह णेयो॥55॥

जिस प्रकार निविड लोह की शृंखला नर व पशु को बांधने में समर्थ होती है उसी प्रकार आत्मा का सबसे जटिल बंधन लोभ जानना चाहिए।

तत्थ दु कोहो माणं, माया णियमा जत्थ तिव्व-लोहो।

विणा लोहक्खयेणं, संभवो केवलणाणं णो॥56॥

जहाँ तीव्र लोभ होता है वहाँ क्रोध, मान व माया नियम से होते हैं। लोभ के क्षय के बिना केवलज्ञान संभव नहीं है।

लोभ क्षय हेतु निर्देश

जदणेण खयसु लोहं, जाव लोहो ताव रागो णियमा।

रागे जीविदे सया, देसो चिय मुच्छिदो जं तं॥57॥

जब तक लोभ है तब तक राग नियम से होता है और राग के जीवित रहने पर उस समय द्वेष भी मूर्च्छित रहता है। अतः हे भव्यजीव! यत्नपूर्वक लोभ का क्षय करो।

पाप का जनक-पाप

लोहादो संचिणेदि, परिग्गहं चिय असीमिदं जीवो।

संगे य विज्जमाणे, किं खयदे विसयाभिलासा॥58॥

विसयाहिलासाए दु, अचोरियवदं णो सुज्झदि कयाइ।
तस्स अभावे को सग-सच्चरूवं लहिदुं सक्को॥59॥

जत्थ असच्च-रज्जं हु, संकप्पी आरंभी उज्जोगी।
विरोहि-चउविहहिंसा, तत्थ पावं पाव-जणगं च॥60॥

[तिअं]

लोभ से जीव असीमित परिग्रह का संचय करता है। परिग्रह के विद्यमान होने पर क्या विषयों की अभिलाषा नष्ट होती है? कभी नहीं होती और विषयों की अभिलाषा से अचौर्यव्रत कदापि शुद्ध नहीं होता व उस अचौर्यव्रत के अभाव में अपने सत्य-स्वरूप को प्राप्त करने में कौन समर्थ होता है? तथा जहाँ असत्य का राज्य है वहाँ संकल्पी, आरंभी, उद्योगी व विरोधी चार प्रकार की हिंसा विद्यमान रहती है। उचित ही है कि पाप ही पाप को उत्पन्न करने वाला है।

आत्मघातक-कषाय

जहवि सगप्पघादगा, चउकसाया हवंते णियमादो।
तहवि णिगामदुल्लहा, णिवत्ती दु लोहकसायस्स॥61॥

यद्यपि चारों कषाय नियम से अपनी आत्मा का घात करने वाली होती हैं तथापि लोभ कषाय की निवृत्ति अत्यन्त दुर्लभ है।

बिंब प्रतिबिंबवत् कषाय-नोकषाय

णिल्लूरिदुं कसाया, जो को वि समत्थो चिय पुरिसो सो।
णोकसाया वि खयंति, बिंबे णट्ठे पडिबिंबं वि॥62॥

जो कोई भी पुरुष कषायों को निर्मूल करने में समर्थ है उसकी नोकषाय भी नष्ट होती है। क्योंकि बिंब के नष्ट होने पर प्रतिबिंब भी नष्ट हो ही जाता है।

सुख का कारण-प्रशमभाव

पसमभावजुदस्स ते, ण दुहहेदू समणेसु कसायेसु।
मुच्छिदो सत्तू णेव, जोहस्स दुहहेदू जह तह॥63॥

जिस प्रकार मूर्च्छित शत्रु एक योद्धा के लिए दुःख का कारण नहीं होता उसी प्रकार कषायों के शमन होने पर वे कषाय प्रशमभाव से युक्त जीव के लिए दुःख का कारण नहीं होतीं।

गुणोत्पादक-प्रशमभाव

पसमभावादो जणदि, संवेगो अणुकंपा अत्थिक्कं।
जह दीवे पज्जलणे, पयासो तम-णासो णियमा॥64॥

जैसे दीपक के प्रज्ज्वलित होने से प्रकाश होता है, अंधकार का नाश होता है उसी प्रकार प्रशम भाव से संवेग, अनुकंपा व आस्तिक्य भाव नियम से उत्पन्न होता है।

प्रशम भाव द्वारा राष्ट्र व आत्महित

अणुसासण-रक्खा कुल-मज्जादारोग्ग-सक्किदीणं चिय।
पसमभावेण कुडुंब-समाज-देस-विस्साण हिदं॥65॥

प्रशम भाव से अनुशासन की रक्षा, कुल मर्यादा, आरोग्य व संस्कृति की रक्षा होती है तथा परिवार, समाज, देश व विश्व का हित होता है।

पसमभावेण झाणं, तच्चचिंतण-वेरग्ग-वद-तवाणि।
वड्ढेदि धम्ममग्गे, मोक्खमग्गे वि सगहिदत्थं॥66॥

प्रशम भाव से सम्यक् ध्यान, वैराग्य, व्रत, तप व तत्त्वचिंतन होता है एवं स्वहित के लिए वह जीव धर्ममार्ग व मोक्षमार्ग पर भी बढ़ता है।

प्रशमभाव से सुकार्यों की सफलता

सामाइयं वंदणा, थुदी पडिक्कमणं पच्चक्खाणं।
काउस्सग्गो विणओ, वेज्जावच्चं सज्झाओ य॥67॥

झाणं पायच्छित्तं, अणसणं जिणपूया सुगुरुसेवा।
सुकज्ज-सफलीभूदं पसमभावसंजुद-जीवस्स॥68॥
(जुम्मं)

प्रशम भाव से युक्त जीव के सामायिक, वंदना, स्तुति, प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान, कायोत्सर्ग, विनय, वैयावृत्ति, स्वाध्याय, ध्यान, प्रायश्चित, उपवास, जिनपूजा व गुरुसेवादि सभी श्रेष्ठ कार्य सफलीभूत होते हैं।

प्रशमभाव का फल

सिद्धीसर-रायस्स दु, गहदि पसमभाव-रायदूदं जो।
ठादि सग-समीवे सो, णिवसेदि दु सिद्धालयं अध॥69॥

जो सिद्धीश्वर राजा के प्रशम भाव रूप राजदूत को ग्रहण करता है वह निजात्म समीप स्थित होता है, अनंतर सिद्धालय में निवास करता है।

ग्रंथकार की लघुता

पसमभावो विरइदो, मइ सूरि-वसुणंदिणा गुरुकिवाइ।
बालोव्व णं णादूण, संजम-धारगा खमंतु मे॥70॥

गुरु कृपा से मेरे आचार्य वसुनंदी मुनि के द्वारा यह ''प्रशमभाव'' नामक ग्रंथ लिखा गया। यदि इसमें कोई त्रुटि रह गई हो तो संयम को धारण करने वाले साधुजन मुझे क्षमा करें।

अंतिम मंगलाचरण

संतिं पायसायरं, जयकित्तिं देसभूसणं सूरिं।
मे पच्चक्खुवयारिं, णमामि विज्जाणंदसूरिं॥71॥

चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर जी मुनिराज, महातपस्वी आचार्य श्री पायसागर जी मुनिराज, अध्यात्म योगी आचार्य श्री जयकीर्ति जी मुनिराज, भारतगौरव आचार्य

श्री देशभूषण जी मुनिराज एवं मेरे प्रत्यक्ष उपकारी आचार्य श्री विद्यानंद जी मुनिराज को मैं (आचार्य वसुनंदी मुनि) नमस्कार करता हूँ।

प्रशस्ति

पुण्णो पुण्णाहे गइ-आराहणा-गुरु-गगण-वीरद्धे।
चंदप्पह-सिवमासे, सिद्धखेत्त-सुवण्णसेलम्मि॥72॥

गति (4), आराधना (4), गुरु अर्थात् पंचपरमेष्ठी (5), गगन अर्थात् लोकाकाश व अलोकाकाश (2)। 'अंकानां वामतो गतिः' से 2544 वीर निर्वाण संवत् में सिद्धक्षेत्र सोनागिरी में श्री चंद्रप्रभ भगवान् के मोक्षकल्याणक अर्थात् फाल्गुन माह में शुभ दिन में यह ग्रंथ पूर्ण हुआ।

परम पूज्य अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी आचार्य श्री 108

वसुनंदी जी मुनिराज द्वारा रचित व संपादित साहित्य

मौलिक कृतियाँ

प्राकृत साहित्य			
1.	णंदिणंदसुत्तं (नंदीनंद सूत्र)	2.	अज्जसक्किदी (आर्य संस्कृति)
3.	रट्ठ-संति-महाजण्णो (राष्ट्र शांति महायज्ञ)	4.	णिग्गंथ-थुदी (निर्ग्रन्थ स्तुति)
5.	जदि-किदिकम्मं (यति कृतिकर्म)	6.	धम्मसुत्तं (धर्म सूत्र)
7.	अहिंसगाहारो (अहिंसक आहार)	8.	जिणवरथोत्तं (जिनवर स्तोत्र)
9.	तच्च-सारो (तत्त्व सार)	10.	विज्जावसु-सावयायारो (विद्यावसु श्रावकाचार)
11.	अणुवेक्खा-सारो (अनुप्रेक्षा सार)	12.	सुद्धप्पा (शुद्धात्मा)
13.	रयणकंडो (प्राकृत सूक्ति कोश)	14.	मंगलसुत्तं (मंगलसूत्र)
15.	अट्ठंगजोगो (अष्टांग योग)	16.	णमोयार-महप्पुरो (णमोकार माहात्म्य)
17.	विस्सपुज्जो दियंबरो (विश्वपूज्य दिगंबर)	18.	अप्प-विहवो (आत्म वैभव)
19.	मूलवण्णो (मूलवर्ण)	20.	विस्सधम्मो (विश्व धर्म)
21.	अप्पणिब्भर-भारदं (आत्मनिर्भर भारत)	22.	समवसरण-सोहा (समवसरण शोभा)
23.	पुण्णासव-णिलयो (पुण्यास्रव निलय)	24.	को विवेगी (विवेकी कौन)
25.	तित्थयर-णामत्थुदी (तीर्थंकर नाम स्तुति)	26.	कलाविण्णाणं (कला विज्ञान)
27.	अप्पसत्ती (आत्म-शक्ति)	28.	वयणपमाणत्तं (वचनप्रमाणत्व)
29.	सिरिसीयलणाहचरियं (श्री शीतलनाथ चरित्र)	30.	अज्झप्प-सुत्ताणि (अध्यात्म सूत्र)
31.	असोग रोहिणी चरियं, अशोक रोहिणी चरित्र	32.	खवगराय-सिरोमणी (क्षपकराज शिरोमणि)
33.	लोगुत्तर-वित्ती (लोकोत्तर वृत्ति)	34.	पसमभावो (प्रशम भाव)
35.	समणभावो (श्रमण भाव)	36.	इड्ढिसारो (ऋद्धिसार)
37.	झाणसारो (ध्यान सार)	38.	समणायारो (श्रमणाचार)
39.	सम्मेदसिहरमाहप्पं, सम्मेद शिखर माहात्म्य	40.	जिणवयण-सारो (जिनवचन सार)
41.	अम्हाण आयवत्तो (हमारा आर्यावर्त)	42.	विणयसारो (विनय सार)
43.	भत्तिगुच्छो (भक्ति गुच्छ)	44.	तव-सारो (तपसार)
45.	भाव-सारो (भावसार)	46.	दाण-सारो (दानसार)
47.	लेस्सा-सारो (लेश्या सार)	48.	वेरग्ग-सारो (वैराग्य सार)
49.	णाण-सारो (ज्ञानसार)	50.	णीदि-सारो (नीति सार)
51.	धम्म-सुत्ति-संगहो (धर्म सूक्ति संग्रह)	52.	कम्म-सहावो (कर्म स्वभाव)
53.	प्राकृत वाणी भाग-1-2-3-4		

टीका ग्रंथ			
1.	प्रमेया टीका-रत्नमाला (संस्कृत)	2.	वसुधा टीका-द्रव्यसंग्रह (संस्कृत)
3.	नय प्रबोधिनी-आलाप पद्धति (हिंदी)	4.	श्रीनंदा टीका-सिद्धिप्रिय स्तोत्र

इंग्लिश साहित्य			
1.	Inspirational Tales	2.	Meethe Pravachan Part-I

वाचना साहित्य			
1.	मुक्ति का वाग्दान (इष्टोपदेश)	2.	बोधि वृक्ष (प्रश्नोत्तर रत्नमालिका)
3.	शिवपथ का रथ (सामायिक पाठ)	4.	स्वात्मोपलब्धि (समाधि तंत्र)

प्रवचन साहित्य			
1.	आईना मेरे देश का	2.	उत्तम क्षमा धर्म (आत्मा का ए.सी. रूम)
3.	उत्तम मार्दव धर्म (मान महाविष रूप)	4.	उत्तम आर्जव धर्म (रंचक दगा बहुत दु:खदानी)
5.	उत्तम शौच धर्म (लोभ पाप का बाप बखाना)	6.	उत्तम सत्य धर्म (सतवादी जग में सुखी)
7.	उत्तम संयम धर्म (जिस बिना नहिं जिनराज सीझे)	8.	उत्तम तप धर्म (तप चाहे सुरराय)
9.	उत्तम त्याग धर्म (निज हाथ दीजे साथ लीजे)	10.	उत्तम आकिंचन धर्म (परिग्रह चिंता दु:ख ही मानो)
11.	उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म (चेतना का भोग)	12.	खुशी के आँसू
13.	खोज क्यों रोज-रोज	14.	गुरुत्तं भाग 1
15.	गुरुत्तं भाग 2	16.	गुरुत्तं भाग 3
17.	गुरुत्तं भाग 4	18.	गुरुत्तं भाग 5
19.	गुरुत्तं भाग 6	20.	गुरुत्तं भाग 7
21.	गुरुत्तं भाग 8	22.	गुरुत्तं भाग 9 (सोलहकारण भावना)
23.	गुरुत्तं भाग 10	24.	गुरुत्तं भाग 11
25.	गुरुत्तं भाग 12	26.	गुरुत्तं भाग 13
27.	गुरुत्तं भाग 14	28.	गुरुत्तं भाग 15
29.	गुरुत्तं भाग 16	30.	गुरुत्तं भाग 17 (बारह भावना)
31.	चूको मत	32.	जय बजरंगबली
33.	जीवन का सहारा	34.	ठहरो! ऐसे चलो
35.	तैयारी जीत की	36.	दशामृत
37.	धर्म की महिमा	38.	ना मिटना बुरा है न पिटना

39.	नारी का धवल पक्ष	40.	शायद यही सच है
41.	श्रुत निर्झरी	42.	सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य की शौर्य गाथा
43.	सीप का मोती (महावीर जयंती)	44.	स्वाति की बूँद

हिंदी गद्य रचना			
1.	अन्तर्यात्रा	2.	अच्छी बातें
3.	आज का निर्णय	4.	आ जाओ प्रकृति की गोद में
5.	आधुनिक समस्यायें प्रमाणिक समाधान	6.	आहारदान
7.	एक हजार आठ	8.	कलम पट्टी बुद्धिका
9.	गागर में सागर	10.	गुरु कृपा
11.	गुरुवर तेरा साथ	12.	जिन सिद्धांत महोदधि
13.	डॉक्टरों से मुक्ति	14.	दान के अचिन्त्य प्रभाव
15.	धर्म बोध संस्कार (भाग 1-4)	16.	धर्म संस्कार (भाग 1-2)
17.	निज अवलोकन	18.	वसु विचार
19.	वसुनन्दी उवाच	20.	मीठे प्रवचन (भाग 1)
21.	मीठे प्रवचन (भाग 2)	22.	मीठे प्रवचन (भाग 3)
23.	मीठे प्रवचन (भाग 4)	24.	मीठे प्रवचन (भाग 5)
25.	मीठे प्रवचन (भाग 6)	26.	रोहिणी व्रत कथा
27.	स्वप्न विचार	28.	सद्गुरु की सीख
29.	सफलता के सूत्र	30.	सर्वोदयी नैतिक धर्म
31.	संस्कारादित्य	32.	हमारे आदर्श

हिंदी काव्य रचना			
1.	अक्षरक्षरातीत	2.	कल्याणी
3.	चैन की जिंदगी	4.	ना मैं चुप हूँ ना गाता हूँ
5.	मुक्ति दूत के मुक्तक	6.	हाइकू
7.	हीरों का खजाना	8.	सुसंस्कार वाटिका

विधान रचना			
1.	कल्याण मंदिर विधान	2.	कलिकुण्ड पार्श्वनाथ विधान
3.	चौंसठऋद्धि विधान	4.	णमोकार महार्चना
5.	दु:खों से मुक्ति (वृहद् सहस्रनाम महार्चना)	6.	यागमंडल विधान
7.	समवसरण महार्चना	8.	श्री नंदीश्वर विधान
9.	श्री सम्मेदशिखर विधान	10.	श्री अजितनाथ विधान

11.	श्री संभवनाथ विधान	12.	श्री पद्मप्रभ विधान
13.	श्री चंद्रप्रभ विधान (देहरा तिजारा)	14.	श्री चंद्रप्रभ विधान
15.	श्री पुष्पदंत विधान	16.	श्री शांतिनाथ विधान
17.	श्री मुनिसुव्रतनाथ विधान	18.	श्री नेमिनाथ विधान
19.	श्री महावीर विधान	20.	श्री जम्बूस्वामी विधान
21.	श्री भक्तामर विधान	22.	श्री सर्वतोभद्र महार्चना
23.	श्री पंचमेरू विधान	24.	लघु नंदीश्वर विधान
25.	श्री चौबीसी महार्चना		

प्रथमानुयोग साहित्य

1.	अमरसेन चरित्र (कविवर माणिक्कराज जी)	2.	आराधना कथा कोश (ब्र. श्री नेमीदत्त जी)
3.	करकण्डु चरित्र (मुनि श्री कनकामर जी)	4.	कोटिभट श्रीपाल चरित्र (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
5.	गौतम स्वामी चरित्र (मण्डलाचार्य श्री धर्मचंद्र जी)	6.	चारूदत्त चरित्र (ब्र. श्री नेमीदत्त जी)
7.	चित्रसेन पद्मावती चरित्र (पं. पूर्णमल्ल जी)	8.	चेलना चरित्र
9.	चंद्रप्रभ चरित्र	10.	चौबीसी पुराण
11.	जिनदत्त चरित्र (कविवर ब्रह्मराय)	12.	त्रिवेणी (संग्रह ग्रंथ)
13.	देशभूषण कुलभूषण चरित्र	14.	धर्मामृत (भाग 1-2) (श्री नयसेनाचार्य जी)
15.	धन्यकुमार चरित्र (आ. श्री सकलकीर्ति जी)	16.	नागकुमार चरित्र (आ. श्री मल्लिषेण जी)
17.	नंगानंग कुमार चरित्र (श्रीमान् देवदत्त)	18.	प्रभंजन चरित्र (कविवर ब्रह्मराय)
19.	पाण्डव पुराण (श्री मदाचार्य शुभचंद्र देव)	20.	पार्श्वनाथ पुराण (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
21.	पुण्याश्रव कथा कोष (भाग 1-2) (श्री रामचंद्र मुमुक्षु)	22.	पुराण सार संग्रह (भाग 1-2) (आ. श्री दामनंदी जी)
23.	भरतेश वैभव (कवि रत्नाकर)	24.	भद्रबाहु चरित्र
25.	मल्लिनाथ पुराण (आ. श्री सकलकीर्ति जी)	26.	महीपाल चरित्र (कविवर श्री चारित्र भूषण)
27.	महापुराण (भाग 1-2)	28.	महावीर पुराण (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
29.	मौनव्रत कथा (आ. श्री श्रीचंद्र स्वामी जी)	30.	यशोधर चरित्र

31.	रामचरित्र (आ. श्री सोमदेव स्वामी)	32.	रोहिणी व्रत कथा
33.	व्रत कथा संग्रह	34.	वरांग चरित्र (आ. श्री जटासिंह नंदी)
35.	विमलनाथ पुराण (श्री ब्रह्मचारीश्वर कृष्णदास जी)	36.	वीर वर्धमान चरित्र
37.	श्रेणिक चरित्र	38.	श्रीपाल चरित्र (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
39.	श्री जम्बूस्वामी चरित्र (श्री वीर कवि)	40.	शांतिनाथ पुराण (भाग 1-2) (कवि असग जी)
41.	सप्तव्यसन चरित्र (आ. श्री सोमकीर्ति भट्टारक)	42.	सम्यक्त्व कौमुदी
43.	सती मनोरमा	44.	सीता चरित्र (श्री दयाचंद गोलीय)
45.	सुरसुंदरी चरित्र	46.	सुलोचना चरित्र
47.	सुकुमाल चरित्र	48.	सुशीला उपन्यास
49.	सुदर्शन चरित्र (आ. श्री विद्यानंदी जी)	50.	सुभौम चक्रवर्ती चरित्र
51.	हनुमान चरित्र	52.	क्षत्र चूड़ामणि (जीवंधर चरित्र)

संपादित कृतियाँ (संस्कृत प्राकृत साहित्य)

1.	आराधना सार (श्रीमद्देवसेनाचार्य जी)	2.	आराधना समुच्चय (श्री रविचन्द्राचार्य)
3.	अध्यात्म तरंगिणी (आचार्य सोमदेव सूरी जी)	4.	कर्म विपाक (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
5.	कर्मप्रकृति (सिद्धांतचक्रवर्ती आ. श्री अभयचंद्र जी)	6.	गुणरत्नाकर (रत्नकरण्ड श्रावकाचार) (आ. श्री समंतभद्र स्वामी जी)
7.	चार श्रावकाचार संग्रह	8.	जिनकल्पि सूत्र (श्री प्रभाचंद्राचार्य जी)
9.	जिन श्रमण भारती (संकलन-भक्ति, स्तुति, ग्रंथादि)	10.	जिन सहस्रनाम स्तोत्र
11.	तत्त्वार्थ सार (श्री मदमृताचन्द्राचार्य सूरि)	12.	तत्त्वार्थस्य संसिद्धि
13.	तत्त्वार्थ सूत्र (आ. श्री उमास्वामी जी)	14.	तत्त्वज्ञान तरंगिणी (श्रीमद्भट्टारक ज्ञानभूषण जी)
15.	तच्च-वियारो सारो (सि. च. आ. श्री वसुनंदी जी)	16.	तत्व भावना (आ. श्री अमितगति जी)
17.	धर्म रत्नाकर (श्री जयसेनाचार्य जी)	18.	धम्म रसायण (आ. श्री पद्मनंदी स्वामी जी)
19.	ध्यान सूत्राणि (श्री माघनंदी सूरी)	20.	नीतिसारसमुच्चय (आ. श्री इंद्रनंदीस्वामी)
21.	पंच विंशतिका (आ. श्री पद्मनंदी जी)	22.	प्रकृति समुत्कीर्तन (सिद्धांत चक्रवर्ती श्री नेमिचंद्राचार्य जी)
23.	पंचरत्न	24.	पुरुषार्थसिद्ध्युपाय (आ. श्री अमृतचंद्रस्वामी जी)
25.	मरणकण्डिका (आ. श्री अमितगति जी)	26.	भगवती आराधना (आ. श्री शिवकोटी स्वामी जी)

27.	भावत्रयफलप्रदर्शी (आ. श्री कुंथुसागर जी)	28.	मूलाचार प्रदीप (आ. श्री सकलकीर्तिस्वामी जी)
29.	योगामृत (भाग 1-2) (मुनि श्रीबाल चंद्र जी)	30.	योगसार (भाग 1, 2) (मुनि श्री अमितगति जी)
31.	रयणसार (आ. श्री कुंदकुंद स्वामी)	32.	वसुऋद्धि
*	रत्नमाला (आ. श्री शिवकोटि स्वामी जी)	*	स्वरूप संबोधन (आ. श्री अकलंक देव जी)
*	पूज्यपाद श्रावकाचार (आ. श्री पूज्यपाद जी)	*	इष्टोपदेश (आ. श्री पूज्यपाद स्वामी जी)
*	लघु द्रव्य संग्रह (आ. श्री नेमीचंद्र स्वामी जी)	*	वैराग्यमणिमाला (आ. श्री विशालकीर्ति जी)
*	अर्हत् प्रवचनम् (आ. श्री प्रभाचंद्र स्वामी जी)	*	ज्ञानांकुश (आ. श्री योगीन्द्र देव)
33.	सुभाषित रत्न संदोह (आ. श्री अमितगतिस्वामी जी)	34.	सिन्दूर प्रकरण (आ. श्री सोमदेव स्वामी जी)
35.	समाधि तंत्र (आ. श्री पूज्यपाद स्वामी जी)	36.	समाधि सार (आ. श्री समंतभद्र स्वामी)
37.	सार समुच्चय (आ. श्री कुलभद्र स्वामी जी)	38.	विषापहार स्तोत्र (महाकवि धनंजय)

संपादित हिंदी साहित्य

1.	अरिष्ट निवारक त्रय विधान • नवग्रह विधान • वास्तु निवारण विधान • मृत्युंजय विधान (पं. आशाधर जी कृत)		
2.	श्री जिनसहस्रनाम एवं पंचपरमेष्ठी विधान		
3.	श्री जिनसहस्रनाम विधान (लघु) आदि एक नाम अनेक		
4.	शाश्वत शांतिनाथ ऋद्धि विधान • भक्तामर विधान (आ. मानतुंग स्वामी जी (मूल) • शांतिनाथ विधान (पं. ताराचंद्र जी) • सम्मेदशिखर विधान (पं. जवाहर दास जी)		
5.	कुरल काव्य (संत तिरुवल्लुवर)	6.	तत्त्वोपदेश (छहढाला) (पं. प्रवर दौलतराम जी)
7.	दिव्य लक्ष्य (संकलन- हिंदी पाठ, स्तुति आदि)	8.	धर्म प्रश्नोत्तर (आ. श्री सकलकीर्ति जी)

9.	प्रश्नोत्तर श्रावकाचार (आ. श्री सकलकीर्ति जी)	10.	भक्तिसागर (चौबीसी चालीसा संग्रह)
11.	विद्यानंद उवाच (आ. श्री विद्यानंद जी मुनिराज)	12.	सुख का सागर (चौबीसी चालीसा)
13.	संसार का अंत	14.	स्वास्थ्य बोधामृत
15.	पिच्छि-कमण्डलु (आ. श्री विद्यानंद जी मुनिराज)		

गुरु पद विनयांजली साहित्य			
1.	आचार्य श्री विद्यानंद जी की यम सल्लेखना (मुनि प्रज्ञानंद)	2.	अक्षर शिल्पी (मुनि शिवानंद)
3.	पगवंदन (मुनि शिवानंद प्रशमानंद)	4.	वसुनंदी प्रश्नोत्तरी (मुनि जिनानंद, ऐ. विज्ञान सागर)
5.	दृष्टि दृश्यों के पार (आ. श्री वर्धस्व नंदनी, वर्चस्व नंदनी)	6.	स्मृति पटल से भाग-1 (आ. श्री वर्धस्व नंदनी)
7.	स्मृति पटल से भाग-2 (आ. श्री वर्धस्व नंदनी)	8.	अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी (ऐलक विज्ञान सागर)
9.	गुरु आस्था (ऐलक विज्ञान सागर)	10.	परिचय के गवाक्ष में (ऐलक विज्ञान सागर)
11.	स्वर्णोदय (ऐलक विज्ञान सागर)	12.	स्वर्ण जन्मजयंती महोत्सव (ऐलक विज्ञान सागर)
13.	हस्ताक्षर (ऐलक विज्ञान सागर)	14.	वसु सुबंधं (महाकाव्य) (प्रो. डॉ. उदयचंद जी जैन)
15.	समझाया रविन्दु न माना (सचिन जैन 'निकुंज')		